शोध मंथन Vol. XII No.III July-Sep. 2021 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

'सांख्य दर्शन' अनीश्वरवादी नहीं हैः एक विमर्श

प्राप्तिः 27.08.2021
स्वीकृतः 31.08.2021

डॉ० रंजना अग्रवाल (एसोसिऐट प्रोफेसर)
संस्कृत विभाग
एन०के०बी०एम०जी०कॉलेज, चन्दौसी
ईमेलः *brajendrasingh094@gmail.com*

सारांश

भारतीय दर्शन के छः प्रकारों में से सांख्य (साङ्ख्य) दर्शन प्राचीनकाल में अत्यन्त लोकप्रिय तथा प्रथित हुआ था। इसके प्रवर्तक 'कपिल मुनि ' कहे जाते हैं। इस नाम की व्याख्या अनेक प्रकार से की गयी है।इसी दर्शन ने सर्वप्रथम तत्वों का परिगणन या गिनती किया ,जिनका ज्ञान हमें मोक्ष की ओर ले जाता है।गिनती को कहते हैं 'संख्या' तथा संख्या की प्रधानता रहने से इस दर्शन का नाम 'सांख्य' पड़ा। इसप्रकार 'संख्या हैसम्बंधी' विश्लेषण सांख्य दर्शन है। इससे भी सुंदरतम व्याख्या दूसरी यह है कि संख्या का अर्थ है विवेक ज्ञान। प्रकृति और पुरुष के विषय में अज्ञान होने से यह संसार है और जब हम इन दोनों के विवेक को जान लेते हैं कि पुरुष (जीव) प्रकृति (भूत) से भिन्न है तथा स्वतंत्र है।तब हमें मोक्ष की प्राप्ति होती है।इसी विवेक ज्ञान की प्रधानता होने से इस दर्शन का नाम सांख्य पड़ा। इसकी सबसे प्रमुख धारणा सृष्टि के प्रकृति–पुरुष से बनी होने की है, यहाँ प्रकृति (यानि पंचमहाभूतों से बनी) जड़ है और पुरुष (यानि जीवात्मा) चेतन। योग शास्त्रों के ऊर्जा स्रोत (ईडा–पिंगला), शाक्तों के शिव–शक्ति के सिद्धांत इसके समानान्तर दीखते हैं।

किसी समय भारतीय संस्कृति में सांख्य दर्शन का स्थान अत्यन्त ऊँचा था। देश के उदात्त मस्तिष्क सांख्य की विचार पद्धति से सोचते थे। महाभारतकार ने यहाँ तक कहा है कि इस लोक में जो भी ज्ञान है वह सांख्य से आया है। (ज्ञानं च लोके यदिहास्ति किञ्चित् साङ्ख्यागतं तच्च महन्महात्मन् (शांति पर्व 301.109)'1 वस्तुतः महाभारत में दार्शनिक विचारों की जो पृष्ठभूमि है, उसमें सांख्यशास्त्र का महत्वपूर्ण स्थान है। शान्ति पर्व के कई स्थलों पर सांख्य दर्शन के विचारों का बड़े काव्यमय और रोचक ढंग से उल्लेख किया गया है। सांख्य दर्शन का प्रभाव गीता में प्रतिपादित दार्शनिक पृष्ठभूमि पर पर्याप्त रूप से विद्यमान है।

'महर्षि कपिल को कई लोग अनीश्वरवादी दर्शन मानते हैं। इनमें प्रायः सभी पश्चिमी विद्वान हैं। कुछ भारतीय विद्वान् भी इनमें सम्मिलित हैं। परन्तु ये सभी विद्वान, बौद्ध और जैन आचार्यों द्वारा सांख्य दर्शन की अपार लोकप्रियता और सर्वस्वीकार्यता के कारण, की गई निन्दात्मक आलोचना से प्रभावित हुए लगते हैं।

परन्तु सांख्य दर्शन अनीश्वरवादी नहीं है। यह तथ्य स्वयं सांख्यसूत्रों से प्रकट होती है। भगवद्गीता में भी इस अनीश्वरवादी धारणा का निषेध किया गया है।

इस लेख में सांख्य दर्शन के सूत्रों से ही यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि यह अनीश्वरवादी दर्शन नहीं है।

यह भी बताया जाएगा कि ब्रह्मसूत्र भी सांख्य दर्शन की मान्यताओं के आधार पर ही ब्रह्म की जिज्ञासा का समाधान करते हैं।

इसकी लोकप्रियता का कारण एक यह अवश्य रहा है कि इस दर्शन ने जीवन में दिखाई पड़ने वाले वैषम्य का समाधान त्रिगुणात्मक प्रकृति की सर्वकारण रूप में प्रतिष्ठा करके बड़े सुंदर ढंग से किया। सांख्याचार्यों के इस प्रकृति–कारण–वाद का महान गुण यह है कि पृथक्–पृथक् धर्म वाले सत, रजस् तथा तमस् तत्वों के आधार पर जगत् की विषमता का किया गया समाधान बड़ा बुद्धिगम्य प्रतीत होता है। किसी लौकिक समस्या को ईश्वर का नियम न मानकर इन प्रकृतियों के तालमेल बिगड़ने और जीवों के पुरुषार्थ न करने को कारण बताया गया है। यानि, सांख्य दर्शन की सबसे बड़ी महानता यह है कि इसमें सृष्टि की उत्पत्ति भगवान के द्वारा नहीं मानी गयी है बल्कि इसे एक विकासात्मक प्रक्रिया के रूप में समझा गया है और माना गया है कि सृष्टि अनेक अनेक अवस्थाओं (चींमे) से होकर गुजरने के बाद अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त हुई है। कपिलाचार्य को कई अनीश्वरवादी मानते हैं पर भगवद्गीता और सत्यार्थप्रकाश जैसे ग्रंथों में इस धारणा का निषेध किया गया है।

'सांख्य दर्शन' अनीश्वरवादी नही है : एक विमर्श

यही मेरे शोध–पत्र का विषय है ।

छः भारतीय दर्शनों में सांख्य दर्शन, प्राचीनकाल में अत्यन्त लोकप्रिय तथा प्रसिद्ध हुआ था। इसकी स्थापना करने वाले मूल व्यक्ति, महर्षि कपिल हैं। महर्षि कपिल का नाम भगवान कृष्ण ने भगवद्गीता में आदर सहित लिया है।

सिद्धानां कपिलो मुनिः।

भगवद्गीता १०–२६ '2

सिद्धों (सिद्धान्तों की, तर्क सङ्गत व्याख्या करने में सफल पुरुष) में, मैं कपिल मुनि हूँ।

महर्षि कपिल के शिश्यों में पञ्चशिख, आसुरि, देवल और असित के नाम विशेष रूप से लिये जाते हैं। इनमें से देवल और असित के नाम का उल्लेख भगवद्गीता में भी है।

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिनारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चौव ब्रवीषि मे।। भगवद्गीता १०–१३ '3

(आप आदिदेव और विभु है, ऐसा) आपको सभी ऋषि, असित, देवल, व्यास तथा देवर्षि नारद कहते हैं। आप स्वयं भी ऐसा ही बोल रहे हैं।

भगवद्गीता में प्रतिपादित, सांख्य दर्शन से युक्त सिद्धान्तों का समर्थन, उपर्युक्त सभी ऋषि करते हैं। इनमें महर्षि वेदव्यास भी हैं, जो महाभारत और ब्रह्मसूत्रों के प्रवक्ता हैं।

'सांख्य' का शाब्दिक अर्थ है – 'संख्या सम्बंधी' अथवा तर्कसङ्गत विश्लेषण। इसकी सबसे प्रमुख धारणा सृष्टि के प्रकृति–पुरुष से बनी होने, की है। यहाँ प्रकृति जड़ है और पुरुष चेतन।

भारतीय संस्कृति में किसी समय सांख्य दर्शन का अत्यन्त ऊँचा स्थान था। देश के उदात्त चिन्तक, सांख्य की विचार पद्धति से सोचते थे। महाभारत में कहा गया है –

ज्ञानं च लोके यदिहास्ति किंचित् सांख्यागतं तच्च महन्महात्मन्।

(महा.शांतिपर्व 301–109) '4

वस्तुतः महाभारत में वर्णित दार्शनिक विचार, सांख्य शास्त्र से प्रभावित और अनुप्राणित हैं। शान्ति पर्व के कई स्थलों पर, इसके विचारों का बड़े ही रोचक ढँग से उल्लेख किया गया है। सांख्य दर्शन का प्रभाव, गीता में प्रतिपादित दार्शनिक सिद्धान्तों पर पर्याप्त रूप से विद्यमान है।

इसकी लोकप्रियता का प्रमुख कारण यह है कि इस दर्शन ने जीवन में दिखाई पड़ने वाले वैषम्य का समाधान, त्रिगुणात्मक प्रकृति की प्रधान–कारण रूप में प्रतिष्ठा करके, बड़े सुन्दर ढँग से किया। सांख्याचार्यों के इस प्रकृति–कारण–वाद का महान गुण यह है कि पृथक्–पृथक् धर्म वाले सत्, रजस् तथा तमस् गुणों के आधार पर जगत् की विषमता का किया गया समाधान, अत्यन्त बुद्धिगम्य है। साधारण जन भी इसे सरलता से समझ सकते हैं। किसी लौकिक समस्या को समझाने के लिए इन प्रकृति से उत्पन्न इन गुणों के अनुपात में परिवर्तन को समझना आवश्यक है। सांख्य दर्शन में जीवों के पुरुषार्थ करने के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है। सांख्य दर्शन की सबसे बड़ी महानता यह है कि इसमें सृष्टि की उत्पत्ति, मूल प्रकृति के तीनों गुणों की साम्यावस्था को भङ्ग कर उत्तरोत्तर पदार्थों का निर्माण बताकर इसे एक विकासात्मक प्रक्रिया के रूप में समझा गया है।

महर्षि कपिल को कई लोग अनीश्वरवादी दर्शन मानते हैं। इनमें प्रायः सभी पश्चिमी विद्वान हैं। कुछ भारतीय विद्वान् भी इनमें सम्मिलित हैं। परन्तु ये सभी विद्वान्, बौद्ध और जैन आचार्यों द्वारा सांख्य दर्शन की अपार लोकप्रियता और सर्वस्वीकार्यता के कारण, की गई निन्दात्मक आलोचना से प्रभावित हुए लगते हैं। ईश्वरकृष्ण की 'सांख्यकारिका' इसी प्रकार का ग्रन्थ है। अद्वैत दर्शन के प्रतिपादक स्वामी शंकराचार्य भी सांख्य के प्रबल आलोचक थे। वे अद्वैत दर्शन की प्रतिष्ठा करने के लिए ब्रह्मसूत्रों के ग्रन्थ वेदान्त को ही अद्वैतवेदान्त कहने लगे थे। वेदान्त दर्शन को अद्वैत वेदान्त की संज्ञा देने वाले संन्यासी यही थे। आजकल यह अद्वैतवेदान्त शब्द बहुत प्रचलित है। आधुनिक काल में डा. राधाकृष्णन और लोकमान्य तिलक जैसे विद्वान् भी इस सांख्य शास्त्र को अनीश्वरवादी मानते हैं। ऐसे भारतीय विद्वान् पश्चिमी विद्वानों द्वारा प्रतिपादित विचारों को देखकर अपना मत निर्धारित करते हैं।

परन्तु सांख्य दर्शन अनीश्वरवादी नहीं है। यह तथ्य स्वयं सांख्यसूत्रों से प्रकट होती है। भगवद्गीता में भी इस अनीश्वरवादी धारणा का निषेध किया गया है।

इस लेख में सांख्य दर्शन के सूत्रों से ही यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि यह अनीश्वरवादी दर्शन नहीं है। इसके साथ ही यह भी बताया जाएगा कि ब्रह्मसूत्र भी सांख्य दर्शन की मान्यताओं के आधार पर ही ब्रह्म की जिज्ञासा का समाधान करते हैं।

महर्षि कपिल, सांख्य के प्रथम सूत्र में ही इसे लोक की समस्याओं के समाधान हेतु उपयोगी बताते हैं।

अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्त पुरुषार्थः।

सांख्य दर्शन १–१ '5

अथ शब्द ग्रन्थ के प्रारम्भ का सूचक है।

अब तीनों (आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक) दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति हेतु अत्ययधिक पुरुषार्थ (आवश्यक है, ऐसा वर्णन आरम्भ करते हैं)

सांख्याचार्य यह मानता है कि –

१. संसार है।

२. संसार में किसी (जीव) को त्रिविध दुःख होते हैं।

३. जिसे त्रिविध दुःख होते हैं, उसका अस्तित्व है।

४. वह (जीव) उन दुःखों से छुटकारा पाना चाहता है।

५. इन त्रिविध दुःखों से छुटकारा मिल सकता है।

६. इसके लिए विपुल प्रयत्न करना आवश्यक है।

इन छः तथ्यों का वर्णन इस एक सूत्र में है।

संसार है, तो वह पदार्थ अवश्य होगा जिससे संसार बना है। संसार का भौतिक अंश जड़ है। इसलिए जिस मूल पदार्थ से, संसार का यह भौतिक अंश बना हुआ है, वह भी जड़ ही होगा। इस सम्बन्ध में सांख्य दर्शन कहता है –

नावस्तुनो वस्तुसिद्धिः।

सांख्य दर्शन १–७८ '6

अवस्तु से वस्तुसिद्धि नहीं है।

संसार को कार्यजगत् कहा जाता है। यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है। इस प्रत्यक्ष सिद्ध पदार्थ को असत्य अथवा मिथ्या नहीं कहा जा सकता। इसीलिए इसके मूल पदार्थ, मूल

प्रकृति को भी असत्य अथवा मिथ्या नहीं कहा जा सकता। यह इस सूत्र का तात्पर्य है।

एक अन्य सूत्र में कहा है कि–

न कर्मण उपादानत्वायोगात्।

सांख्य दर्शन १–८१ '7

नहीं होता, कर्मणः (कर्म का अर्थात् कर्म का फल) उपादान के साथ संयोग के बिना।

जब तक जगत् के उपादान (जिस पदार्थ से संसार बना है, उसे उपादान और जिसके बनाने से बना, उसे निमित्त कहते हैं) के साथ संयोग नहीं होता तब तक कर्मफल नहीं होता।

किसका संयोग? कौन से कर्म का फल?

जिसने जगत् को बनाया उसका संयोग। जगत् को बनाने का कर्म। जगत्, उसी किये गये कर्म का फल अथवा परिणाम है।

सांख्याचार्य का यह कहना है कि जब तक रचनाकार का रचना के मूल पदार्थ से संयोग न होगा, तब तक रचना नहीं हो सकती। घड़ा बनने में, घड़ा रचना है। इसका मूल पदार्थ मिट्टी है। इस मिट्टी (उपादान) से, कुम्हार (घड़े का निमित्त कारण) का जब तक संयोग नहीं होगा, तब तक घड़ा नहीं बन सकता।

सांख्य दर्शन में एक अति महत्त्वपूर्ण सूत्र आया है जिसके आधार पर ही कुछ लोग इसे अनीश्वरवादी बताया करते हैं। वह सूत्र इस प्रकार है।

ईश्वरासिद्धेः।

सांख्य दर्शन १–९२ '8

ईश्वर की सिद्धि न होने से।

अर्थात् प्रत्यक्ष प्रमाण से ईश्वर की सिद्धि नहीं होने से।

इस सूत्र का अर्थ करने से पहले यह देखना आवश्यक है कि यह सूत्र किस प्रसङ्ग में और क्यों कहा गया है। देखिए –

निजमुक्तस्य बन्धध्वंसमात्र परं न समानत्वम्।

सांख्य दर्शन १–८६ '9

अपने गुणों से मुक्त के बन्ध का विनाश परम साध्य है। यह समानत्व नहीं है।

यह प्रसङ्ग, प्रकृति के दो रूपों का चल रहा है। एक उसका मूल अव्यक्त रूप और दूसरा उसका ही व्यक्त रचित जगत् रूप।

जब प्रकृति के तीन गुण साम्यावस्था में होते हैं, तो उसे बन्ध अवस्था और जब गुणों की साम्यावस्था भङ्ग होकर वे क्रियाशील हो उठते हैं, तब उसे मुक्तावस्था कहा जाता है।

इस सूत्र १८६ का अर्थ है कि प्रकृति की साम्यावस्था का भङ्ग होना, सामान्य ध्वंस (रचित जगत् के रूपों में परिवर्तन) नहीं है। अन्य प्रकार के ध्वंस से इसकी कोई सामानता नहीं। यह अति महान् कार्य है।

द्वयोरेकतरस्य वाप्यसन्निकृष्टार्थपरिच्छित्तिः प्रमा तत्साधकतमं यत्तत् त्रिविधं प्रमाणम्।

सांख्य दर्शन १–८७ '10

इन दोनों (बन्ध और मुक्त सूत्र १ं८६) में अथवा उनमें से किसी एक का पूर्व अज्ञात अर्थ का निश्चयात्मक ज्ञान प्रमा है। उसको सिद्ध कर सकने वाले प्रमाण तीन हैं।

वे तीन प्रमाण हैं प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द।

तत्सिद्धौ सर्वसिद्धेर्नाधिक्यसिद्धिः।

सांख्य दर्शन १–८८ '11

उसके (तीन प्रमाणों द्वारा) सिद्ध हो जाने पर सब कुछ सिद्ध हो जाता है। तब सिद्ध करने के लिए पुनः अधिक प्रमाणों की आवश्यकता नहीं है।

यत्सम्बद्धं सत् तदाकारोल्लेखि विज्ञानं तत् प्रत्यक्षम्।

सांख्य दर्शन १–८६ '12

जिसके साथ जो सम्बन्ध हो, उसी आकार को धारण करने वाला अथवा उस आकार का उल्लेख करने वाला जो ज्ञान है, वह प्रत्यक्ष है।

इसका तात्पर्य यह है कि पाँच ज्ञानेन्द्रियों को, वस्तु के सम्पर्क में आने पर जो ज्ञान होता है, वह प्रत्यक्ष ज्ञान है।

योगिनामबाह्यप्रत्यक्षत्वान्न दोषः।

सांख्य दर्शन १–६० '13

योगियों का ज्ञान बाह्य प्रत्यक्ष न होने से, (भी) दोष नहीं है।

ज्ञान प्राप्त करने के दो करण होते हैं। बाह्य और आभ्यन्तरिक। बाह्य करण अर्थात् पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और आभ्यन्तरिक करण अर्थात् मन और बुद्धि। यह सूत्र कह रहा है कि योगियों का ज्ञान, बाह्य इन्द्रियों से नहीं, मन और बुद्धि से भी होता है, तो भी वह दोषमुक्त होता है। अर्थात् सत्य होता है।

लीनवस्तुलब्धातिशयसम्बन्धद्वाऽदोषः।

सांख्य दर्शन १–६१ '14

लीन वस्तु से अतिशय सम्बन्ध से प्राप्त ज्ञान भी दोशरहित है।

इस सूत्र का तात्पर्य है कि लीन वस्तु से योगी का घनिष्ट सम्बन्ध होने पर प्राप्त ज्ञान भी सत्य है। लीन वस्तु में प्रकृति तथा पुरुष दोनों ही नहीं आते। प्रकृति के विविध रूप, क्रमशः लीन होते होते, महत् तक जाते हैं। यह महत् प्रकृति में लीन होता है। प्रकृति किसी में लीन नहीं होती।

अब यहाँ पर ईश्वरासिद्धेः सूत्र १–६२ है।

इतने सूत्रों का उल्लेख करने का अभिप्राय यह दिखाना है कि प्रत्यक्ष प्रमाण का प्रकरण चल रहा है और यह कहा है कि इससे ईश्वर असिद्ध है।

योगियों का ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण के अतिरिक्त, आभ्यन्तरिक भी होता है। उससे ईश्वर सिद्धि होती है।

यह मैं आगे लिख रही हूँ

अकार्यत्वेऽपि तद्योगः पारवश्यात्।

सांख्य दर्शन ३–५५ '16

अकार्यत्व होने पर भी उसका संयोग है परवशता के कारण।

अर्थात् जीवात्मा किसी का कार्य (जीवात्मा को किसी ने नहीं बनाया) नहीं है, तो भी उसका प्रकृति से (शरीरधारणादि) सम्बन्ध होता है। इसमें उसका वश नहीं चलता। वह परवश होता है।

किसके वश में होता है? यह आगे के सूत्र में है।

स हि सर्ववित् सर्वकर्त्ता।

सांख्य दर्शन ३–५६ '17

वह सब कुछ जानता है और वह सब कुछ का करने वाला है।

यह ईश्वर के सम्बन्ध में कहा जा रहा है कि वह सर्वज्ञ और सर्वकर्त्ता है।

ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा।

सांख्य दर्शन ३–५७ '18

इस प्रकार ईश्वर की सिद्धि सिद्ध है।

तात्पर्य यह है कि युक्ति से ईश्वर सिद्ध होता है प्रत्यक्षादि प्रमाणों से नहीं। यही ईश्वर सबको कर्मफल देने से परवश करता है, सर्वज्ञ है और सब कुछ का कर्त्ता है।

यह सब मैंने यह बताने के लिए लिखा कि सांख्य दर्शन अनीश्वरवादी नहीं है।

अब मैं संक्षेप में यह लिखूँगी कि ब्रह्मसूत्रों में कैसे सांख्य दर्शन के सिद्धान्तों को स्वीकार किया गया है।

ब्रह्मसूत्र का पहला सूत्र है–

अथातो ब्रह्म जिज्ञासा।

ब्रह्मसूत्र १–११ '19

अब, यहाँ (इस कारण से) ब्रह्म जिज्ञासा (का समाधान) करते हैं।

जन्माद्यस्य यतः

ब्रह्मसूत्र १–१–२ '20

इसके जन्मादि, जिससे हैं।

जन्मादि – जन्म, स्थिति और मृत्यु। उत्पत्ति, स्थिति और लय।

अस्य – इसके। किसके? इस सामने उपस्थित संसार के।

यतः – जिससे होते हैं।

यह सूत्र बता रहा है कि

१. संसार है।

२. इस संसार की उत्पत्ति होती है, स्थिति होती है और अन्त में लय हो जाता है। यह क्रम निरन्तर चलता रहता है।

३. संसार के ये जन्मादि अपने आप नहीं होते, किसी के करने से होते हैं।

४. जिससे होते हैं। वह ब्रह्म है।

ये सब वर्णित सिद्धान्त सांख्य दर्शन के भी हैं।

शास्त्रयोनित्वात्

ब्रह्मसूत्र १–१–३ '21

(वह ब्रह्म) शास्त्र (संसार का शासन करने के ढँग बताने वाला) की योनि (उद्गम स्थल) होने से।

शास्त्र को बताने (वेद का ज्ञान देने) वाला परमात्मा है।

तत्तु समन्वयात्।

ब्रह्मसूत्र १–१–४ '22

वह तो (इस कारण) समन्वय होने से (सिद्ध होता है)

कार्य का कारण से सम्बन्ध समन्वय कहा जाता है।

कार्य किससे हुआ? कार्य किसके करने से हुआ? कार्य कैसे हुआ? कार्य किसके लिए हुआ? यह सब समन्वय है।

संसार का निर्माण, एक कार्य है। यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है। यह किस पदार्थ से बना? वह मूल पदार्थ अव्यक्त प्रकृति है। प्रकृति से जगत् को रचने का कार्य परमात्मा ने किया। परमात्मा ने अपने पराक्रम से यह निर्माण कार्य किया। यह कार्य उसने अपने स्वभाव धर्म के कारण जीवात्मा के (उपयोग के) लिए किया।

ब्रह्मसूत्र के ये आधारभूत सूत्र उन्हीं तथ्यों और सिद्धान्तों का उल्लेख कर रहे हैं जो सांख्य दर्शन के भी आधारभूत सिद्धान्त हैं।

मेरा यही कहना है कि सांख्य दर्शन और ब्रह्मसूत्रों में अविरोध है। केवल विषय वस्तु के वर्णन करने के ढँग और वर्ण्य विषय के निर्धारण में कुछ विभेद दिखाई देता है।

सन्दर्भ सूची

1. शान्ति पर्व –301–109
2. श्रीमद्भगवद्गीता–10–26
3. श्रीमद्भगवद्गीता–20–23
4. महाभारत–शान्तिपर्व–301–109
5. सांख्य दर्शन–1–1
6. सांख्य दर्शन–1–78
7. सांख्य दर्शन–1–81
8. ʻʻ 1–82
9. ʻʻ 1–86
10. ʻʻ 1–87
11. ʻʻ 1–88
12. ʻʻ 1–89
13. ʻʻ 1–90
14. ʻʻ 1–91
15. ʻʻ 1–92
16. सांख्य दर्शन – 3–55
17. सांख्य दर्शन– 3–56
18. सांख्य दर्शन– 3–57
20. ब्रह्मसूत्र–1–1–1
21. ब्रह्मसूत्र–1–1–2
22. ब्रह्मसूत्र–1–1–3
23. ब्रह्मसूत्र–1–1–4